नित्यलीलास्थ गोस्वामी श्री ६ श्री गोकुलाधीशजी महाराज के

२५ वचनामृत.

वचनामृत १.

कोई समे नंदगाँवमें कूवापें एक वेरागी वेठ्यो हतो । वाको एक व्रजवासिनीने पूछी, "जो बाबाजी! दरसन करी आये?" तब वा वेरागीने कही, "जो में तो दिनभरमें आज दरसन नही किये!" तब वा बाईने कही; "जो तू चले तो आपुन संग चली दरसन करी आवें। में जेहर गहेना पहिर के आउं। तू यांहीं वेठ्यो रहियो।" तब वा वेरागीने कही; "तू वेग अइयो" इतनो कही के वेरागी वेठ्यो; ओर वह बाई जेहर धरिवे गइ; सो फिर न आइ। ओर वह वेरागी राह देखदेख संध्या

समो भयो तब वहां ही सोय रह्यो, सो रात्रिकुं नींदमें वह वेरागीकुं सुपनो भयो, तामें देखे तो वह बाइ संग मिलके दरसनकुं गयो हे, सो दरसन करत श्रीनाथजीने अपनी पागमेंसों गुलाबको फूल वा वेरागीकुं दियो ओर श्रीदाउजीने गेंदाको फूल दियो, ओर इ सुख बहुत भयो, सब रात्रि सुखमें वीती। सवेरो भयो तब वेरागी जाग्यो। इतनेमें वह बाई कूवापें जल भरिवेकुं आइ। तब वह वेरागी बाईसुं लरिवे लाग्यो। ओर कही, "जो तू मोकुं कूवापें वेठाय जाय सोय रही, मोकुं दरसन बिना राख्यो, ओर सब रात जाडेसुं मार्यो"। तब वा बाईने कही, "जो बावाजी! जूठ क्यों वोले हे? आपुन दरसनकुं चले हते"। सो तब वेरागीने कही, "जो कब चले हते?" तब वा बाईने सुपनाको सुख सब कह सुनायो। तब

बा वेरागीकुं बडो आश्चर्य भयो । सो वा बाईकुं साष्टांग दंडवत् कियो तब बाईने कही " जो बाबाजी ! तेने कहा ब्रज सूनो देख्यो ? अबी तो ब्रज हे " ।

वचनामृत २.

एक समे श्रीगुसांईजी ठकुरानी घाट पें बिराजत हते । दोनों लालजी संग हते । तामें श्रीगिरिधरजी आपकी दाहिनी ओर बिराजत हते । ओर श्रीगोकुलनाथजी बांही ओर बिराजत हते । संध्या को समो हतो । कछु अंधेरो भयो हतो । वा समे श्रीजमुनाजीमें एक बडको पतौवा पैर्यो जात हतो । तब श्री गुसांईजीने श्रीगिरिधरजीसुं कही, " जो गोवर्धन ! देख केसो सुंदर ढांकको पतौवा पेर्यो जाय हे ? " तब श्री गिरिधरजीने कही, " हां, काकाजी ! "

ता बातकी श्री गोकुलनाथजीको बुहुत रीस चडी । सो श्रीगुसांईजीके आगे तो कछु बोले नाहीं । जब घर पधारे, तब श्रीगिरिधरजीसुं कही, "जो दादाभाई ! काकाजीने बडको पतौवाको ढांकको पतौवा कह्यो सो तो ठीक; जो काकाजीको तो वृद्ध श्रीअंग भयो हे, ओर संध्याको समय हतो, जासुं वडके पतौवाको ढांकको पतौवा कह्यो। परंतु आपने हांमें हां केसे मिलाई ? तब श्रीगिरिधरजी बोले; "जो भाई ! काकाजीको श्रीअंग वृद्ध भयो जासुं दृष्टिबल कछु थोरो होयगो, सो ये बात केसे संभवे ? पुरुषोत्तमको दृष्टबल कब घटे ? परंतु काकाजी को मन या बिरियां श्याम ढांकपे हतो, जासुं वडके पतौवाको ढांकको पतौवा कह्यो । " तब श्रीगोकुलनाथजीने कही, "जो दादाभाई ! "काकाजी के मनकी तो आपने ही जानी " ।

वचनामृत ३.

एक समे श्रीगुसांईजी श्याम ढांकपे बिराजत हते। बडे पुत्र श्रीगिरिधरजी पास बिराजत हते। इतनेमें मरे गधाकुं बहारवारे घसीट ले जाते हते। तापें श्रीगुसांईजीकी दृष्टि परी। तब श्रीगिरिधरजीनें कही, "जो गोवर्धन! यह कहा हे?" तब श्रीगिरिधरजीने कही, "जो काकाजी! यह तो बहारवारे लोग हे, सो मरे गधाकुं घसीट ले जाय हें।" इतनो सुनत ही आपके नेत्रनमें जल भरि आयो। ओर कही, "जो या गधाके भाग्यको बर्नन कहांताइ करे? गोवर्धन! तू मोकुं एसेही करीयो।" ता बातकुं बहुत बरस भये। जब आपकी इच्छा लीलामें पधारवेकी भइ, तब गोविंदस्वामीको हाथ सायके कंदरामें पधारे। तब श्रीगिरिधरजी पीछे पीछे चले। तब आपने

कही, "जो गोवर्धन ! तोकुं तो अब ढील है।
एसे दोय चार वेर आपने कही। तो हू श्रीगिरि-
धरजी पीछे पीछे आये। तब आपकुं श्याम
ढांककी बातकी सुध आई। तब श्रीअंगको
उपरना श्रीगिरिधरजीकुं दियो ओर कही,
"जो यासों करियो।"

वचनामृत ४.

एक समे श्री दाउजी महाराजकी दादी
श्रीकमलावहूजीसों वहोराने प्रश्न कियो,
"जो महाराज ! श्रीमहाप्रभुजीके सेवक केसे?"
तब आपने आज्ञा करी, "जो कहा कहेनो ?
श्रीमहाप्रभुनके सेवक साक्षात् कुंदन" तब
फेर विनति करी, "जो महाराज ! श्रीगुसांई-
जीके सेवक केसे ?" तब आपने आज्ञा करी,
"जो वाह ! कहा कहेनो ? श्रीगुसांईजीके सेवक

साक्षात् चांदी।" तब फेर बिनति करी, "जो महाराज! सातो बालकन के सेवक केसे?" तब अपने आज्ञा करी, "जो कहा कहेनो? सातो बालकनके सेवक साक्षात् धातु।" तब फेर बिनति करी, "जो महाराज! आपके सेवक केसे?" तब कही, "जो वहोरा! हमारे सेवक तो कंकर-पत्थर!!" तब वहोराने साष्टांग दंडवत् कर ओर कही, "जो जेजेजे कृपासिन्धु! न तो श्रीमहाप्रभुजीसुं भई, न श्रीगुसांईजीसुं भई, न सातो बालकनसुं भई, जो आपसुं भई।" एसे बहोराके बचन सुनके पहेले तो आप खीजे, पीछे तो प्रसन्न भये ओर बाइसुं कही, "अरी, देखतो; तोसाखानामें, कोइ चुनडी हे? बहोरा! तोकुं तो बनाउंगी बनडी, ओर श्रीगोकुलनाथजीकुं बनाउंगी बनडा, ओर सहेराको सिंगार करुंगी, और कछु सामग्री। बहोरा! काल तोको

आज्ञा हे। तब बहोराने कही, “जो कृपानाथ! या घडी के लिये मेनें आज तांइ ब्रह्मसंबंध नाहीं कियो।”

वचनामृत ५.

ओर एक समे कसुंबा छठ्ठको उत्सव नजीक आयो। तब श्रीगुसांईजीने एक आदमीतें कही, “जो श्रीनाथजीकी पाग रंगारीके यहां ते ले आव।” सो आदमी लेयवे गयो। सो जाय के देखे तो रंगारी रंग के घूंट भरभर के पागकुं छिरकें हें। सो देखके आदमीने आय के श्रीगुसांईजीसुं कही, “जो राज! रंगारी या तरहसुं पाग रंगे हे।” तब आप तो कछु बोले नहीं। जब रंगारी पाग रंगके तैयार कर लायो, तब श्रीगुसांईजीने कही, “जो पागको रंग उतार ले। तब वह रंगारी पाग ले जाय के

जीतनो रंग पाग पे चडायो हतो, सो उतारके कोरी पाग पहुचायके चल्यो गयो। जब दिन आठ उत्सवके रहे तब श्रीनाथजीने श्रीगुसांईजीसुं कही, "जो मेंतो वाही की रंगी पाग धरुंगो।" तब श्रीगुसांईजीने फिर वह रंगारीकुं बुलायके श्रीनाथजीकी पाग सोंपी ओर कही, "जब तैयार होय तब पहुंचाय जैयो, हमारो आदमी न आवेगो"। ओर पहेलो जो आदमी पाग लेयवे गयो हतो ताको आप बहुत बरजे ओर कही, "जो मूढ! तोकुं पाग लेयवे पठायो हतो के रंगारीके कृत्य देखवेकुं पठायो हतो? आज पीछे कोइ मत जैयो"।

वचनामृत ६.

एक समे श्रीनाथजी श्याम ढांकपे खेलत हते ओर गोविंदस्वामी संग हे। उत्थापनको

समय हतो सो श्रीनाथजी खेलत खेलत मोहना भंगी की कांध पे जाय चढे। सो गोविंदस्वामीने देखे। देखत खेम श्रीनाथजीकी ग्रीवा सायके कुंडमें डुबाय दिये। अब मंदिरमें उत्थापन के समय श्रीगुसांईजी पधारे। सो देखे तो मंदिर सब कसुंबामय होय रह्यो हे! तब श्री गुसांईजीने श्रीनाथजी सुं पुछी, "जो बावा! यह कहा!" तब श्रीनाथजीने कही, "जो तुमारे गोविंदने मोकु जलमें डुबायो।" तब आपने गोविंदस्वामी सुं कह्यो "जो गोविंद, यह कहा?" तब गोविंदस्वामीने कही, "जो राज! में कहा करूं? आप जाय के मोहना भंगी की कांध पे चढे।" तब श्री गुसांईजी बोले, "जो ब्रह्म हु छुवाय हे कहा?" तब गोविंदस्वामीने कही, "जो ब्रह्म तो नाही

छुवाय, परंतु श्रीमहाप्रभुजीके घरकी मड छुवाय जाय।" तब श्रीगुंसाईजी चूप होय रहे।

वचनामृत ७.

एक समे श्री गुसांईजीने श्रीनवनीत-प्रियाजीको गोविंदघाट पे पालने झुलाये। सो चादरमें पधरायके दोय छेडा श्री गुसांईजीने साये ओर दोय छेडा श्रीगिरिधरजीने साये। ओर पलना झुलाये सो झुलावत झुलावत श्री गुसांईजीको हृदय भरी आयो। ओर नेत्रनमें जल भरी आयो। तब श्री गिरिधरजीने कही, "जो काकाजी! आप खेद क्यों करो हो? आवती सालको अपने श्रीनवनीतप्रियाजीको सोनेके पलनामें झुलावेंगे।" ऐसे करत वरस दिन पीछे दूसरी नवमी आइ! सोनेको पलना सिद्ध भयो। श्रीनवनीतप्रियजीको झुलाये। झुलावती बिरियां श्रीगिरिधरजीने कही, "जो काकाजी! अब तो आप राजी भये?" तब

श्रीगुसांईजीनेकही, "जो गोवर्धन ! वह सुख सो कहां ?"

वचनामृत ८.

अब और कहत हैं। जब श्री आचार्यजी महाप्रभुजीने संन्यास धारण कियो, तब श्री गुसांईजी ओर श्रीगोपीनाथजी श्रीमहाप्रभुजी की पास हनुमान घाट की बेठक पधारे। वहां जाय श्रीमहाप्रभुजीसो विनति करी, "जो राज! आगे कलियुग हमकुं हू बाधा करेगो ?" तब श्रीमहाप्रभुजीने आज्ञा करी, "जो हां, हां तुमकुं कलियुग बाधा करेगो।" यह आपके वचन सुन दोनों स्वरूपके मुखारविंद शुष्क व्हे गये। तब आपने बिचारी, जो हां, इनकूं दुःख तो भयो। तब फेर आपने आज्ञा करी, जो मोकूं श्रीगोपीजनवल्लभ करके जानोगे, तो तुमको कलियुग बाधा न करेगो।

वचनामृत ९.

एक समे श्रीगोकुलनाथजी परदेश पधारे हते ओर बालक सब घर हते । ओर श्रीगिरिधरजी तो लीलामें पधारे सो बालकने श्रीगिरिधरजीकी बेठक श्रीमहाप्रभुजी श्रीगुसांईजीकी बेठक सुं न्यारी राखी सो जब श्रीगोकुलनाथजी परदेश सुं पधारे, श्रीमहाप्रभुजी श्री गुसांईजीके दर्शन किये, ओर श्री गिरिधरजीकूं न देखे, तब ओर बालकनसुं पूछी, "जो दादा कहां हे?" तब ओर बालकनने कही "जो जेवन घरमें हें ।" तब श्रीगोकुलनाथजीने कही, जो क्यों? तातजीमें ओर काकाजीमें ओर दादामें कछु फेर हे?" ऐसे कही के तीनों स्वरूप पास पास पधरायें ।

वचनामृत १०.

ओर एक समे श्रीबालकृष्णजीने लडुवा खायके हांडी फोरी । तिनको श्रीछोटाजीके

वहूजी सिंगार धरावत हते। सो सिंगार धरावती बेर श्रीबालकृष्णजी मुख फेरके बिराजे। तब श्रीचारुमती वहूजीने कही, "जो लालन! यह कहा? कछु तो कारन हे।" एसे कहिके एक हांडी लडुवासों भरके आगे लाय धरी ओर कही, "जो लालन! आछी तरह अरोगो"। वाही समे श्रीबालकृष्णजी सूधे बिराजे। सो श्रीजीवनजी महाराजके दोय लालजी; १ बडे श्रीव्रजाधीशजी, २. छोटे श्रीव्रजपतिजी। बडे वहूजी। श्रीगंगा वहूजी, छोटे वहूजी। श्रीचारुमती वहूजी। बडे वहूजीने तो श्रीव्रजनाथलालं नगरवारेनको गोद बेठारे। सो श्रीव्रजाधीशजी ओर श्रीव्रजपतिजी दोनों स्वरूपनके संग एक पुष्करना ब्राह्मण नित्य खेलवेकु आवतो। याको नाम कमल हतो। सो जब कमल गयो सुन्यो तब श्रीजीवनजीके वहूजीने कही, जो जल हू गयो ओर कमल हू गयो।

वचनामृत ११.

बहुरी श्रीगुसांईजीको श्रीनाथजीने दूसरी बेर ब्याहवेकी आज्ञा करी ! छ लालजी तो प्रगट भये हते । तो हू श्रीनाथजीकी आज्ञातें दूसरो ब्याह कियो । तामें सातमे लालजी श्रीघनश्यामजी प्रगटे । सो घनश्यामजीके प्रकटे पीछे थोरे ही दिनमें श्रीघनश्यामजीके माजी लीलामें पधारे । तब श्रीघनश्यामजीको श्रीगिरिधरजीके वहूजी श्रीभामिनीजीने पाले पोषे; अनेक तरह क लाड लडाये । जब श्रीघनश्यामजी दोय बरस के भये, तब एक दिन खेलत खेलत श्रीगुसांईजीकी गोदमें आय बिराजे । तब आपने श्रीअंगपर श्रीहस्त फेर्यो, सो श्रीअंग बहुत पुष्ट देख्यो । तब आपने पूछी, " यह कोनसे लालजी हे ? " तब जो पास बेठे हते, विनने कही, " जो राज ! यह तो श्रीघनश्या-

मजी आपके सातमे लालजी हे ”। तब तो श्रीगुसांईजी बहुत प्रसन्न भये ओर कही, “जो भामिनीने ठवरकुं ऐसो पाल्यो ? भामिनी ! तेरी गोद सदा भरी रहेगी। ”ऐसे तीन बेर आशीर्वाद दियो।

वचनामृत १२.

एक समे कोई संघ व्रजयात्रा करिवेकुं चल्यो। ता संगमें एक वैष्णव हतो, सो बहुत संकोचमें हतो। सो रसोईसुं पहुंचके वही सखडीकी हंडीयां धोय, पोंछके, लाठीमें अटकाय के ले चलतो। सो जा दिन अपने देसतें चल्यो ओर व्रजमें आयो तहां तांइ एक वही हांडी रही। सो ओर जो संगमें मनुष्य हते, विनने श्री गुसांईजीके आगे चुगली करी, “जो महाराज! या वैष्णवने या रीतसुं अनाचार मिलायो हे।” तब आपने वासुं कही, “ जो क्यों रे ?

तेने ऐसो अनाचार मिलायो ?" तब वा वैष्णवने बिनति करी, " जो राज ! आप तैलंग हो तो योंही डूब्यो ओर योंही डूब्यो। ओर जो आप पुरुषोत्तम हो तो यह हंडीयां मेरो कहा करेगी ?" इतनो सुनके आप मुसक्याये।

वचनामृत १३.

नारायनदास दीलहीके बादशाहके दिवान हते। परगनो कमावते। सो एक दिन चुगलीखोरने चुगली करी, " जो साहब ! नारायनदास सब खाय जाय हे। अच्छी चीज जीतनी आवे सो सब अपने गुरुके घर भेज देता हे। ओर द्रव्य बी अपने गुरुके घर बहुत पहुंचाता हे। सो साहबकुं निगाह किया चाहिये। " तब बादशाहने वाही क्षण हुकम कियो, " जो नारायनदासकुं घर सें बुलाओ। " सो आदमी नारायनदासकुं बुलायवे गयो। सो नारायनदास

वा बिरियां श्रीठाकुरजीकुं सिंगार धरावत हते । ओर आदमीने जायके कही, “ जो साहबका हुकम हे कि येही बखत चलो । तब नारायनदासजी सेवाको कार्य घरकेनकुं सोंपके बादशाहके पास चले । संग पचीस पचास मनुष्य, ओर हाथीके होदापे बेठके चले । बादशाहकुं जाय के सलाम किये । तब बादशाहने कही, “ जो नारायनदास । परगनाको लेखो लाओ । ” तब नारायनदासने कही, “जो साहिब ! हाजर हे ।” अब नारायनदासकी हजूरमें जीतने मनुष्य लिखवेवारे हते, तिनकुं नारायनदासने हुकम कियो, “ जो लेखो तैयार करो । ” अब महेता मुसद्दी सब लिखवे बेठे । ओर नारायनदास सबके लेखो तपासवे लगे । ओर घरको कार्य सब मानसी रीतसुं करन लागे । लेखो देखत जाय ओर मानसी करत

जाय। सो दूध समर्पवेकी बिरियां द्वातमें लेखन डारी, तो स्याही सब दूधमय देखी। ऐसे करत सिंगार सब कर चुके। मुकुट धराय चुके। माला धरावत चूक गये। सो मालाकी गांठ तो पहेलेही लगाय राखी हती। ओर मुकुट बहुत भारी हतो। जासुं मुकुटके उपरसुं माला धरावन लागे। परंतु मुकुट भारी, तातें मुकुटके उपर व्हेके माला न धराय सके। बहुत यत्न कियो, परंतु कोई उपाय चल्यो नहीं। तब तो बहुत व्याकुल भये। तब बादशाह सामे बेठ्यो हतो, सो बोल्यो, "जो देख, सामे देख, ऐसें करके फिर यों करके फिर यों कर।" तब झट नारायनदासकुं सुध आय गई। सो मालाके दोय पल्ला तोरके, धरायके झट मरोड दे दीनी। तब बादशाहने नारायनदासकुं कही, "जो अब घर जाओ। तुमारो लेखो देख चुके।" तब

नारायनदास अपने घरकुं चले। सो मारगमें वा बातकी सुध आई। तब हुकम कियो जो सवारी फेरो। तब सवारी फेरी। सो दरबारमें आई। तब मनुष्यनने कही जो बादशाह तो जनानेमें हे। तब नारायनदास सवारी समेत जनाना घरके नीचे आये। उपर खबर करवाई जो नारायनदास नीचे ठाडे हे। तब बादशाह आय के उपर बारीमें ठाडो रह्यो ओर पूछी, "जो क्यों नारायनदास! पीछा क्यों आया?" तब नारायनदासने कही, "जो वा बात तुमने कैसे जानी?" तब बादशाहने कही, "जो तेरे जेसेनके पांवकी धूरसुं जानी"।

वचनामृत १४.

ओर हू कहत हे। महाराज श्रीगोपेश्वरजी श्रीकृष्णरायजीके पिता, श्रीगोविंदरायजीके दादे ओर श्री गिरिधरजी टिकेतके पर दादे; सो

श्रीगोपेश्वरजीके काका तिनको श्रीअंगमें मां-
दगी भई । सो जब बहुत श्रीअंग घट्यो, तब
घडी घडी में पूछे, "जो गोपेश कहां हे?" तब
विनके लालजीने कही, "जो दादाजी! वे तो
परदेश हे" तब तो आप कछु बोले नहीं।
परंतु घडी घडीमें पूछे गोपेश कहां हे ?" ऐसे
करत जब अचेत भये, तब बडे लालजीने छोटे
लालजीकुं आपकी सान्निध्य बेठाय के विनति
कीनी, "जो दादाजी! गोपेश आपकी सा-
न्निध्य बेठे हें ।" तब आपने लालजीके माथे
श्रीहस्त फेरके आज्ञा करी, "जो चाहे जहां
होय, मेरो तो जो कछु हे सो गोपेशमें ही
जायगो ।" सो श्रीगोपेश्वरजी कैसे भये ?
जिनसों सेव्य स्वरूप साक्षात् वातें करते ओर
मुखसुं आज्ञा करते, "जो ओर तो सब स्वरूप
हमसुं बोले है, एक श्री विठ्ठलेशरायजी के
स्वामिनीजी हमसुं नाही बोले हें ।"

वचनामृत १५.

एक समे श्रीनाथजी के यहां परदेशतें कोई उत्तम सामग्री आई, सो भगवदिच्छातें अनजाने वा सामग्रीकुं प्रसादी हाथ लग गयो। तब मुखीया भीतरीयाननें टिकेतसुं खबर करी। तब टिकेतकुं बडो शोच भयो, जो एसी उत्तम सामग्री श्रीनाथजीके विनियोगमें न आई। तब टिकेतने ओर प्राचीन वृद्ध स्वरूप बिराजत हते विनके आगे कही। तब ऐसो निर्धार वृद्ध स्वरूपनने कियो जो छोटे छोटे बालकनकुं सामग्रीके पास पधराय के भगवन्नामको उच्चार करवाओ, तब अष्टाक्षरको उच्चार कियो। तब वृद्ध स्वरूप हते तिनने कही जो सामग्री छुवाइ गइ। अब गायनको खवाय दो। तब टिकेतने बिनति करी, 'जो जे जे! याको कारन नही समजे।" तब वृद्ध स्वरूपने आज्ञा

करी, "जो जेसे अष्टाक्षरको उच्चार कियो तेसे श्रीमहाप्रभुजी श्रीगुसांईजीको नामोच्चारण करते तो सामग्री नहीं छुवाती।"

वचनामृत १६.

एक समय बाबा जानीजी श्रीजीद्वार गये हते। तब मथुरादास भट्टजी हूं श्रीजीद्वार हते। सो दोउन को समागम भयो। तब मथुरादास भट्टजीने कही, "जो देखो! श्री नाथजीकी टहलके लिये बालक कितनो पचे हे?" तब जानीजी बावाने कही, "ए तो दोय अंगुलीको कारन हे!" इतनो सुनत खेम भट्टजीकों क्रोध उत्पन्न भयो। सो मथुरामल्लजीको उंधो सूधो बोलवे लगे। ओर जानीबावा तो झट वहां ते उठके चले गये। पीछे तें भट्टजीने बिचार कियो, सो विचार करत करत जब जानी बावा के वाक्यको आशय समझे तब मनमे बहुत

प्रसन्न भये। फेर दिन बीसके पीछे जानीबावा भट्टजीके पास गये। तब भट्टजी उठ के ठाडे भये। बहुत आदर सत्कार करिके, बेठायके कही " जो मथुरामल्ल तो वेसेही, परंतु मथुरा-मल्लके संगी तो बहुत आछे "। ऐसे समाधान करके घर पठाये।

(दो अंगुली दिखायबे को रहस्य यह है कि प्रभु की दो अंगुली फिरे जितनो वेणुनाद जिनने सुन्यो है, उनकी सेवामें इतनी आतु-रता होय है।)

वचनामृत १७.

एक बनिया वैष्णव मिरजापुरमें रहत हतो। सो वहां इनकुं एक संन्यासीको संग भयो। सो दिन अरु रात अष्ट प्रहर वा संन्यासी के पास पड्यो रहे। ताको कारन यह जो

संन्यासी पढ्यो बहुत हतो । सो कहुं तें श्री महाप्रभुजीकृत ग्रंथनको पुस्तक वाके हाथ लग्यो। सो बांचके समजवे लग्यो । सो विद्या के बलसुं एसो देख्यो जो पुष्टिमार्ग सर्वोपरि हे। तब प्रभुजीने कृपा कीनी ओर वाको वा बनिया वैष्णवको सत्संग मिलाय दियो। सो एक दिन वा संन्यासीकुं ग्रंथमें कोइ जगह प्रत्यक्ष संदेह दीखवे लग्यो । तब वा बनिया वैष्णवकों ग्रंथ दिखायो । तब वाकुं हू पहेले तो संदेह भयो। तब वाकु सुध आइ जो अमुक पुस्तकमें याको निर्णय हे। तब संन्यासी सुं कही, "जो याको प्रत्युत्तर ओर पुस्तकमें हे।" तब संन्यासीने कही, "जो देखुं तब प्रमाण कहुं" तब ताहि क्षण बनिया अपने घर आयो। सो जीतने पुस्तक हते सो सब खोल के देखन लाग्यो। सो जा पुस्तकमें संदेह

निवृत्त हतो सो पुस्तक बहुत बिरियां देख्यो, परंतु भगवदिच्छातें संदेह निवृत्तिको पत्रा हाथ नहीं लग्यो । तब तो वाको चिंता भइ, जो अब संन्यासीकुं कहा जवाब देउंगो ? फिर नहाय के श्रीसर्वोत्तमजी के पाठ करवे लग्यो । सो दिन अरु रात पाठ करियो करे । खानपान सब छोड दियो। सो तीसरे दिनको अर्धरात्रि वीती तब पाठ करत आंख लगी । तब श्रीमहाप्रभुजीने जताइ, "जो इतनो कष्ट क्यों भुगते हे ? अमुक पुस्तकके सातसे पत्रामें देख" । इतनो सुनत खेम आंख खुल गई, तब वाही क्षण वह पुस्तक निकास सातसो पत्रा देख, तामें सेंधना धर, फिर वाही क्षण नहाय धोय, कपडा पहेरके सवेरे पुस्तक ले संन्यासीके पास चल्यो, जाय के पुस्तके दिखायो । सो देखके आछी तरहसुं निर्णय करिके वा वैष्णवसों

कह्यो "जो इतने दिनमें तो में ऐसे ही जानत हतो जो तुमारे श्रीमहाप्रभुजी भूतलपेसुं पधार गये हैं, अब ऐसी जान परी जो तुमारे श्री महाप्रभुजी भूतलपे अद्यापि बिराजें हैं। तू वैष्णव साचो, तू वैष्णव साचो, तू वैष्णव साचो"। एसे तीन बेर कह के वाको समाधान कियो ॥

वचनामृत १८.

श्रीगुसांईजी परदेश पधारे, सो सेवा बहुत भई। आपने विचारी जो प्रथम परदेश हे, तातें यह द्रव्य श्रीनाथजीके बिनियोग होय तो अछो। एसे विचारके श्रीगुसांईजी सूधे श्रीगिरिराज पधारे। सो मंडानको प्रारंभ कियो। अनेक तरहके आभरन वस्त्र, अनेक तरहकी सामग्रीको प्रमान नाहीं। एक लाख रूपीआतें बढती खर्च भयो। आभरन, वस्त्र, सामग्री सब श्री-

नाथजीको विनियोग भई। राजभोग सरे। राजभोग आरती भये पीछे श्रीगुसांईजी सातों बालक सहित भोजन घरमें पधारे। मुखीया-जीने पट्टा बिछायो और पातर साजी। आप बिराजे। पास सातों लालजी बिराजे। सो भगवदिच्छासों प्रथम आपने मेथीके शाकमें श्रीहस्त डार्यो, सो श्रीमुखमें डारत खेम आपकुं शाक मोटो संवर्यो दीख्यो। सो आप वाही समे विना भोजन किये उठ ठाडे भये। मुखीयाजीने श्रीहस्त धोवाय दिये। और आप विना भोजन किये उठे, तब सातों बालक भोजन केसे करें? सो वेहु श्रीहस्त धोयके उठ ठाडे भये। और आपने यह विचार्यो जो श्रीमहाप्रभुजीने तो एसी आज्ञा करी हे जो ईनकी सेवा सावधान होयके करियो। सो इतनी श्रीमहाप्रभुजीकी आज्ञा हमसुं पली नाहीं

तो यह देह कोन कामकी ? एसो विचार कर आपने प्रथम पुत्र श्रीगिरिधरजीसुं आज्ञा करी, " जो गोवर्धन ! गेरु मंगाय के हमारी परदनी ओर कोपीन रंगके सुकाय दे " । तब श्रीगिरिधरजी तो महाचिंतामें परि गये । ओर आप तो बेठकमें पधारे । श्रीगिरिधरजी मनुष्य पठायके गेरु मंगाय घीसवे लगे । ईतनेमें श्री नवनीतप्रियाजी पधारे । सो श्रीगिरिधरजीसुं पूछी, " जो गोवर्धन । यह कहा कर रह्यो हे?" तब श्रीगिरिधरजीने कही, " जो राज ! काकाजीकी आज्ञा हे जो हमारी परदनी ओर कोपीन गेरुतें रंगके सुकाय दे । सो रंग रह्यो हूं । " तब श्रीनवनीतप्रियाजीने कही, " यह ले, मेरी हू झगुली ओर टोपी रंगके सुकाय दे । तब श्रीगिरिधरजीने " हाय हाय " शब्द उच्चार कियो । जो श्रीगुसांईजी हमारो त्याग

क्रूरके घरमेंसुं पधारे हे। अब हम निर्वाह कोन भांतिसुं करेंगे? सो अत्यंत शोकातुर भये। परंतु आज्ञा भई सो कर्यो चाहिए। तातें दोनों स्वरूपनके वस्त्र रंगके सुकाय दिये। ईतनेमें श्रीगुसांइजी पधारे। सो आपके श्रीअंगमें तो अग्नि जलजलायमान होय रह्यो हे। सो आपके श्रीगिरिधरजीसुं पूछी, "जो परदनी ओर कोपीन रंग लीनी?" तब श्रीगिरिधरजीने कही, "जो हां, काकाजी! यह सूके हे।" सो श्रीगुसांइजी आप उंची दृष्टि करी देखे तो संग, झगुली, टोपी देखी। तब कही, "जो गोवर्धन! यह कहा हे?" तब श्रीगिरिधरजीने कही, "जो में तो गेरू घीस रह्यो हतो, इतनेमें श्रीनवनीतप्रियाजी पधारे, सो पूछी, 'जो गोवर्धन! यह कहा करे हे?' तब मेंने बिनाति करी, "जो काकाजीकी आज्ञा हे जो परदनी

ओर कोपीन गेरूसें रंगके सुकाय दे, सो रंगुं हुं । तब आपने कही, जो ले, मेरी हू झगुली टोपी रंगके सुकाय दे । सो यहां गेरूमें पटकके पधारे । सो रंगके सुकाई हे ।" इतनो सुनके श्रीगुसांइजी चूप होय रहे । फिर हारके बिराजे । या प्रसंगको आशय बहुत कठिन हे । जो एसो भारी मंडान, जामें सेंकडान टोकरा शाकके हते, तामें मेथीको शाक नेक मोटो संवर्यो, तापे आपने एसी विचारी, यामें जीवकी दृष्टि न पहुचे ।

वचनामृत १९.

श्रीमहाप्रभुजी जीतने दिन भूतलपें बिराजे, तानें श्रीअंगमें कछु आभरन नाहीं धर्यो। एक कंठी खरे मोतीनकी महीन श्रीकंठमें धारण करते। सोहु श्रीनाथजीने मागी, "के जो आपकी प्रसादी तो में धरुंगो ।" तब श्रीम-

ह्मप्रभुजीने श्रीनाथजीकुं श्रीकंठमें धराई । सो कंठी अद्यापि धरे हे । अभ्यंग समे सब आभरन वडे होय परंतु कंठी तो सर्वथा वडी न होय।

बचनामृत २०.

पद्मनाभदासजीके माथे श्रीमथुरेशजी बिराजते, सो तुलसांसो (पुत्रीसों) बहुत हीले। दिनभर तुलसांकी गोदमें लोटे ओर अनेक तरेहके तुलसांकुं सुख देते। एसे करत तुलसां बडी भइ तब ब्याही। तब तो तुलसांको लेयके ससुरारतें आये, तब तुलसांको बडो शोच भयो ओर कही जो, यह देह अब श्रीमथुरेशजी विना केसे रहेगी? महाचिंतातुर भई। सो ताप आपसुं सहन न भयो। सो तत्काल तुलसांके पास पधारे। तुलसांसो कही, "तू शोच मत कर। में तेरे संग चलूंगो।" एसे आपके वचन सुनके तुलसां रोम रोम प्रफुल्लित भई। सवेरो भयो।

तुलसां घरके कामसुं पहुंचके प्रसाद ले गाडीमें बेठी । सो वाही क्षण तुलसांके हृदयमेंसु श्री मथुरेशजी दूसरे स्वरूपसुं प्रगटे । सो श्रीमुरलीधरजी महाराज श्रीघनश्यामजी श्रीमथुरानाथजी के पिता कोटावारे के माथे बिराजे हैं। सो श्रीमुरलीधरजी आज्ञा करते जो, "हमकुं सेवा करत कछु अपराध पडे तो हम तुलसांको स्मरण करे !" श्री मुरलीधरजी जब लीलामें पधारे तब श्रीकन्हैयालालजीने एसे कही "जो कोटा रांड होय गइ।" ओर अद्यापि श्री कन्हैयालालजी एसी आज्ञा करे हैं जो हमारे तो श्रीमुरलीधरजी महाराज को प्रताप है।

वचनामृत २१.

गजनधावनके माथे श्रीनवनीतप्रियाजी विराजते, सो जब मंगला समय होय तब पहेले तें मंगलभोगकी सामग्री सिद्ध करि

दोरी साज सिंहासन के सान्निध्य धर पीछे श्रीनवनीत प्रियाजीके शय्यामंदिरमें जाय, अनेक तरेहके लाड प्यार शय्यासान्निध्य बेठके करे। तब श्रीनवनीतप्रियाजी अपने श्रीहस्तसों अपने मुखारविंदके उपरसुं चादर उंची करके जागे। आपही उठके शय्यापर बिराजे। तब गजनधावन आपको पधराय सिंहासनपर पधरावे, ओर बिनति करे, "राज! अरोगो!" तब श्रीनवनीतप्रियाजी अरोगे। एसी रीत सदाकी हती। एक दिन गजनधावन नित्यकी रीत प्रमान मंगलभोग साजके श्रीनवनीतप्रियाजीको जगावन गये, सो बहुत उपाय किये परंतु आप जागे नहीं। तब तो गजधावनको बहुत चिंता भई। जो कहा अपराध पर्यो हे? जो तीन प्रहर दिन चढ्यां, आप जागे नहीं। तब तो पडोसमें ओर वैष्णव हते, तिनतें पूछी

"जो आज आप जागत नाहीं, सो कहा उपाय करुं?" तव पडोसीने पूछी, "जो तुमने आज कहा कहा काम कियो हे?" तब गजनधावनने कही, "जो कामकाज तो सब घरके भीतर कियो हे। एक आंचके लिये बहार गयो हतो। सो लेके फिर घर आय गयो।" तब पाडोसीने पूछी, "जो बहार काहूसों कछु बतरायो?" तब गजनधावनने कही, मैं तो काहूसों बतरायो नाहीं। मोकुं तो एक हमारी ज्ञातिको मिल्यो, सो हुक्का फूंकत चल्यो जात हतो। वाकुं देखके मैं नाकके आडे लता देके चलो आयो।" तब पाडोसीने कही, "जो इनहुको मन दुःख्यो, जासुं आप जागे नाहीं। अब एक काम करो, जो एक नयो हुक्का लेके वाके घरके आगे फिरो, जब वह देखे तब घर आयके नहाइयो।" सो जेसे पडोसीने कही वेसेही गजनधावनने कियो,

जब वो ज्ञातकेने देखे तब घर आयके नहाये। नहायके भीतर आयके देखे तो श्रीनवनीतप्रियाजी शय्याके उपर खेल रहे हे। तब सिंहासनपर पधरायके बिनति करी, "जो राज! अरोगो!" तब आप अरोगे।

वचनामृत २२.

कांकरोलीमें पहेले जो बडे टिकेत बिराजते हते सो राजभोग आरती कर सब सेवातें पहुच्च अनोसर भये पीछे बहार आयके बिराजें और मनुष्य पास ठाडो होय सो हेलो करे-- जो चरणस्पर्श होय हे!! जाको करने होय सो चलो! सो हेला सुनके वैष्णव आवें। सो कोई तो नहायो होय, कोई बिना नहायो होय, कोई बजारके कपडा पहेरे भये छीयेछाये सब आवें, सो चरणस्पर्श करके जाय। तब आप सूधे भोजनकुं पधारे। एसे करत बहुत दिन

भये। तब भैया बंदनमें चर्चा चली, जो वैष्णव बजारमेंसुं छीछायके चरणस्पर्श कर जाय ओर ता पीछे आप बिना नहाये भोजन करे हें सो बात उचित नाहीं। सो भैयाबंद चार स्वरूप एकमत करके कांकरोलीवारे टिकेतके पास पधारे। आपने बहुत आदरसत्कार कियो। फिर टिकेतने बिनति करी, "जो आपको पधारनो कोन कारन भयो? सो कृपाकर कहिये।" तब चारों स्वरूप एक संग बोले, "जो आप सब कंठीबंधको चरणस्पर्श राजभोग पीछे देओ हो, तामें कोई नहायो होय, कोई बजारके कपडा पहेरो होय, सो चरणस्पर्श कर जाय, पीछे आप बिना नहाये, सखडी भोजन करो हो, सो बात उचित नाहीं। तब टिकेतने कही, "जो बात तो प्रमान है, परंतु हमको श्रीद्वारिकानाथजीकी सेवा करतमें अपराध पडे, सो

हम जाने जो वैष्णवके छियेसुं पवित्र होयंगे। जाके लिये इतनो करें हें। ता उपरांत जेसी आज्ञा" इतने वचन टिकेतके सुनके चारों स्वरूप चकित होय रहे, कही "जो आपके मनको अभिप्राय हमने जान्यो नाहीं।" एसे कही के बहुत प्रसन्न भये। सोइ रीत अद्यापि कांकरोलीवारेके घरमें चले हें, तातें बडेनको मंदभागी जीव कहांसुं जाने?

वचनामृत २३.

कांकरोलीवारेके घरमें एक घोडा हतो। सो घोडा दीखवेमें बहुत सुंदर अरु वेसोहा चलवेमें। सो टिकेतको ममत्व घोडापें बहुत भयो। सो सोनेको गहना, रत्नजडित ओर कीनखापको साज, ओर खोराकमें दोय चीज जलेबी अरु दूध। सो या तरहसुं वरस पांच सात कारखानो चल्यो। सो लाखन रुपीआ

उड गये। घर सबरो घोडा खाय गयो। लो-
गनने बहुतेरे समझाये, परतु टिकेतने काहूकी
न सुनी। ओर जगतमें अपकीर्तिको तो कहा
कहेनो? एसे करत कोई प्राचीन स्वरूप टिके-
तके मित्र होयंगे सो पधारे। तब टिकेतने बहुत
आदरसत्कार कियो। बिनति करी, "कहो!
केसे पधारनो भयो?" तब प्राचीन स्वरूपने
कही, "कछु कहेवेकु आयो हुं," तब टिकेतने
कही, "भले सुखेन कहो, आप न कहोगे तो
ओर कोन कहेगो? परंतु जो बात आप कहे-
वेकुं आये हो, सो बात तो मत कहियो।
क्यों? जो या घोडापें तो श्री द्वारिकानाथजी
आप सवारी करें हैं।" इतनो सुनके प्राचीन
स्वरूप बहुत प्रसन्न भये। ओर कही, "जो
अब के या घोडाकों पहेलेतें अधिक लाड ल-
डाइयो।" इतनो कह के घर पधारे। तातें बड-

नके प्रभावको जीव कहा जाने ?

वचनामृत २४.

बहुरी कोई समे कांकरोलीमें भवैया आये। सो खेल बहुत सुंदर कियो । सो नित्य भवाई होय। सो जब एक बरस दिन भयो, तब जगतमें लोग कहिवे लग जो। टिकेत भवैयाको घर खवावे हें। एसे करत कोई परदेशी बालक कांकरोली पधारे । टिकेतसुं कही, "जो वृथा पैसा भवाईमें खराब करने ताको कारन कहा?" तब टिकेतने कही, "हां, आजको दिन तो करावेंगे, फिर जेसे आप आज्ञा करोगे तेसे करेंगे ।" सो वा दिना दोनो स्वरूप संग पधारे। भवाईको प्रारंभ भयो इतनेमें श्रीद्वारिकानाथजी पधारे, सो आयके टिकेतकी गोदमें बिराजे सो परदेशी बालककुं दर्शन भये । सो दर्शन करके बहुत प्रसन्न भये । भवाई पूरन भई,

तब घर आये । तब टिकेतने कही, "भाई ! कहो, अब केसे करेंगे ?" तब परदेशी बालकने कहा, "जो अब एसे करो जो यह भवैया कोई प्रकारसुं सदा यहांही रहे आवे । कहुं जान न पावे ।" एसे कहके पधारे । अब बडेनकी बातमें जीवकी गम कहांताई पहुचे ?

वचनामृत २८.

अब श्रीमहाप्रभुजीने सबनके उपर टोंक करी हे, सो लिखें हें । प्रथम श्रीमहारानीजीकुं, पीछे श्रीनाथजीकुं, पीछे ब्रजभक्तनकुं । श्रीकृष्ण जब द्वारिकाजीसुं स्वधाम पधारे, तब आठा पट्टरानी ओर सब आपको परिकर महाउदास होयके, अर्जुनकुं संग लेके ब्रजमें आये । तब श्रीमहारानीजी आभरनसहित बडे उत्साहसों सामे पधारे । सो देखके विनकुं दुःख बढतो लग्यो । ओर दूसरे जब वसुदेवजी प्रभुनकुं प-

घराय लावत हते, तब जल नासिका ताँई आयो, तब गभराये। तातें आपने दोनों जगह यह टोक करी है, "जो आखिर तो यमकी बहन!" ओर श्रीनाथजीको नाम धर्यो "दुष्ट-दुर्बुद्धिहेतवे नमः।" श्रीस्वामिनीजीकुं जो एसे प्रभुसो हू मान। श्रीयशोदाजीसों कह्यो, जो यह जननी! जो तनक दहींके लिये प्रभुनकों बांधे। ओर व्रजभक्तनको कह्यो जो स्नेहमार्ग छोडके शरनमार्गमें आवत भाये। जब इंद्रने वृष्टि करी, तब गभरायके प्रभुनसों प्रार्थना करी, जो हमारी सहाय करो। परंतु जो कहेते जो प्रभुनको यत्न करो तो आप न टोकते, परतु कह्यो जो हमारी सहाय करो, तातें श्रीमहाप्रभुजीने टोके। जो स्नेहमार्गकुं छोडके शरणमार्गकुं आवत भये।

॥ इति वचनामृत २५ सपूण ॥